अध्याय - 3

भाषा, प्रयोजनमूलक हिन्दी और देवनागरी लिपि

1. भाषा

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है । मनुष्य जाति की व्यावहारिक दुनिया में भाषा का स्थान सर्वप्रथम और कदाचित सर्वोपरि है । समाज में रहने, एक-दूसरे से सम्पर्क बनाने, जीवन के विभिन्न क्रिया-कलापों को सम्पन्न करने, अपने विचारों, आदर्शों, भावों, भावनाओं, अनुभूतियों को सरतलतापूर्वक अभिव्यक्त करने के साथ ही साथ चिंतन-मनन के लिए भी मनुष्य को भाषा जैसे सशक्त सहारे की आवश्यकता होती है । भाषा ही मनुष्य के स्मृति कोश का एक मुख्य आधार है । इसी के सहयोग से मनुष्य विगत और भविष्य को वर्तमान से जोड़ सकता है । दूसरे अर्थों में मनुष्य और भाषा का सम्बन्ध कुछ इस प्रकार का है कि एक के बिना दूसरे की कल्पना नहीं की जा सकती । भाषा ही एक ऐसा साधन है, जिसमें संसार को एकसूत्र में बांधने, परस्पर सहयोग एवं विश्वबंधुत्व की भावना जगाने की अपार क्षमता होती है । इसीलिए भाषा मनुष्य की समस्त उपलब्धियों में सर्वोत्कृष्ट उपलब्धि और समस्त उपलब्धियों, सभ्यता एवं संस्कृति की आधारशिला है ।

भाषा शब्द संस्कृत की "भाष्" धातु से बना है, जिसका अर्थ है - "बोलना" अथवा "कहना" । अर्थात् जिसे बोला जाए या जिसके द्वारा कुछ कहा जाए वह भाषा है ।

सामान्यतः जिन ध्वनि-चिह्नों के माध्यम से मनुष्य परस्पर विचार-विनिमय करता है, उसकी समष्टि को भाषा कहते हैं ।

भाषा की परिभाषा विभिन्न भाषा विद्वानों द्वारा निम्न प्रकार की गई है -

बेंद्रिए के अनुसार -

"भाषा एक तरह का चिह्न है । चिह्न से आशय उन प्रतीकों से है जिनके द्वारा मानव अपना विचार दूसरों पर प्रकट करता है । ये प्रतीक कई प्रकार के होते हैं, जैसे - नेत्रग्राह्य, श्रोतग्राह्य और स्पर्शग्राह्य । वस्तुतः भाषा की दृष्टि से श्रोतग्राह्य प्रतीक ही सर्वश्रेष्ठ है ।"

डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार -

"भाषा उच्चारण अवयवों से उच्चरित मूलतः प्रायः यादृच्छिक ध्वनि-प्रतीकों की वह व्यवस्था है, जिसके द्वारा किसी भाषा के लोग आपस में विचारों का आदान-प्रदान करते हैं ।"

प्रो. देवेन्द्रनाथ शर्मा के अनुसार -

"उच्चरित ध्वनि-प्रतीकों की सहायता से भाव या विचार की पूर्ण अभिव्यक्ति भाषा है ।"

डॉ. बाबूराम सक्सेना के अनुसार -

"यदि वैज्ञानिक दृष्टि से देखा जाए तो भाषा मनुष्य के केवल विचार-विनिमय का ही साधन नहीं है, विचार का भी साधन है ।"

3307

रामेश्वरनाथ भार्गव के अनुसार -

"वे अर्थपूर्ण ध्वनियाँ जिनके द्वारा मानव अपने मनोगत भावों को स्पष्ट करता है भाषा कहलाती है ।"

महामहिम राष्ट्रपति डॉ. शंकरदयाल शर्मा के अनुसार -

"भाषा केवल अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं होती, बल्कि उससे बोलनेवालों की संस्कृति और संस्कार भी जुड़े होते हैं । भाषा जहाँ अपनी सांस्कृतिक विरासत से उपजी हुई होती है वहीं वह इस विरासत को आगे आनेवाली पीढ़ी तक पहुँचाती भी है । इसलिए भाषा का प्रश्न केवल अभिव्यक्ति के माध्यम का प्रश्न नहीं है, बल्कि यह हमारी सांस्कृतिक विरासत और हमारे देश के लोगों के संस्कार से भी जुड़ा हुआ है । फिर लोकतंत्रात्मक शासन पद्धति में तो भाषा का प्रश्न और भी महत्वपूर्ण हो जाता है, क्योंकि जनता तभी कामकाज में सक्रिय रूप से भाग लेसकती है, जबकि राजकाज ऐसी भाषा में हो जिसे वहाँ की जनता अच्छी तरह से समझ सके ।"

भाषा विद्वानों द्वारा दी गई विभिन्न परिभाषाओं को देखने व मनन करने से भाषा सम्बन्धी चार महत्वपूर्ण बातें सामने आती हैं -

1. भाषा मानवीय ध्वनि-प्रतीकों की व्यवस्था है ।
2. भाषा के ध्वनि-प्रतीक यादृच्छिक एवं रूढ़ होते हैं ।
3. भाषा एक नियमबद्ध व्यवस्था है ।
4. भाषा सम्प्रेषण का एक अन्यतम माध्यम है ।

चूँकि भाषा देश की गरिमा और अस्मिता की प्रतीक होती है । उसका सम्बन्ध जनमानस से होता है । अतः किसी देश के विकास और उन्नति के लिए यह परमावश्यक है कि उस देश की कोई भाषा हो, जिसके माध्यम से वह अपने कार्यों का संचालन और प्रतिपादन अच्छी प्रकार से कर सके ।

2. भाषा के प्रकार

प्रयोग के आधार पर भाषा के मुख्य प्रकार निम्नलिखित हैं -

1. राज्यभाषा

राज्य सरकार द्वारा राज्य विशेष के अन्तर्गत प्रशासनिक कार्यों के लिए जिस भाषा का व्यवहार किया जाता है उसे राज्य भाषा कहते हैं ।

यह भाषा पूरे राज्य में बहुसंख्यक द्वारा बोली और समझी जाती है । तथा प्रशासनिक दृष्टि से इस भाषा का पूरे राज्य में एक-सा महत्व होता है ।

भारत में बंगाल की राज्य भाषा बंगला, आसाम की असमिया, उड़ीसा की उड़िया, आंध्र की तेलुगु, मद्रास की तमिल, केरल की मलयालम, मैसूर की कन्नड़, महाराष्ट्र की मराठी गुजरात की गुजराती, पंजाब की पंजाबी, कश्मीर की कश्मीरी तथा उत्तरप्रदेश, बिहार, मध्यप्रदेश और राजस्थान आदि की राज्य भाषा हिन्दी है ।

2. **राष्ट्रभाषा**

राष्ट्रभाषा का शाब्दिक अर्थ है - राष्ट्र की भाषा । किसी राष्ट्र में प्रचलित समस्त प्रादेशिक भाषाएँ राष्ट्रीय भाषाएँ होती हैं, किन्तु इनमें से जिस एक भाषा को राष्ट्र की बहुसंख्यक जनता समझती तथा पारस्परिक व्यवहार में लाती है राष्ट्रभाषा कहलाती है । राष्ट्रभाषा किसी देश की जनता द्वारा स्वेच्छा से विभिन्न भाषा-भाषियों के मध्य व्यवहार चलाने के लिए स्वीकृत भाषा होती है ।

आचार्य नंददुलारे बाजपेयी के अनुसार -

"उसी भाषा का गौरव सबसे अधिक हो सकता है और वही राष्ट्रभाषा कहला सकती है, जिसको सब जनता समझती हो और जिसका अस्तित्व सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हो ।"

डॉ. हरदेव बाहरी के अनुसार -

"जो भाषा थोड़ी-बहुत सारे राष्ट्र में बोली और समझी जाती है वह अपने इस गुण से राष्ट्रभाषा होती है ।"

राष्ट्रभाषा में राष्ट्र की सम्पूर्ण तस्वीर अर्थात् उसकी सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनीतिक सामाजिक एवं आर्थिक संव्यवहार को प्रकट करनेएवं अन्य भाषा के शब्दों को आत्मसात करने की भी क्षमता होती है । यह भाषा सर्वाधिक प्रचलित, विचार सम्पर्क की विविध सम्भावनाओं से पूर्ण उच्च कोटि के विशाल साहित्य एवं वांङमय से सम्पन्न एवं देश की सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय चेतना का संचार करनेवाली होती है । इसमें सम्पूर्ण राष्ट्र को एकता के सूत्र में बांधने, राष्ट्रीयता की भावना से राष्ट्र-हृदय को आंदोलित करने तथा राष्ट्रीय गौरव की महत्ता प्रदर्शित करने की असीम शक्ति निहित होती है ।

प्राचीन भारत में संस्कृत, पालि, शौरसेनी एवं प्राकृत को राष्ट्रभाषा का महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था । आज यही गौरवपूर्ण पद खड़ी बोली हिन्दी को प्राप्त है ।

3. **अन्तर्राष्ट्रीय या विश्वभाषा**

जिस प्रकार किसी देश में प्रचलित अनेक भाषाओं में से एक भाषा विभिन्न ऐतिहासिक, राजनैतिक आदि कारणों से वहाँकि विभिन्न भाषा-भाषी जनता द्वारा पारस्परिक व्यवहार के लिए प्रयुक्त होकर राष्ट्रभाषा का पद ग्रहण करती है उसी प्रकार जब किसी राष्ट्र की भाषा विभिन्न कारणों से अपने राष्ट्र के साथ-साथ संसार के विभिन्न भाषा-भाषी राष्ट्रों द्वारा पारस्परिक व्यवहार की सुविधा के लिए प्रयुक्त होने लगती है तो वह अन्तर्राष्ट्रीय भाषा या विश्वभाषा कहलाती है ।

4. **राजभाषा**

राजभाषा का सामान्य अर्थ है - राजकाज की भाषा । वह सामान्य या परिनिष्ठित भाषा जो सरकारी कामकाज के लिए तथा प्रशासन को सुचारू रूप से चलाने एवं सरकार व जनता के बीच सम्पर्क का काम करने के लिए सर्वसम्मति से तथा संविधान या विधि द्वारा स्वीकृत हो, राजभाषा कहलाती है ।

प्रांतीय सरकारें जनता एवं केन्द्रीय सरकार से राजभाषा में ही सम्पर्क स्थापित करती हैं ।

आचार्य नंददुलारे वाजपेयी के अनुसार -

"राजभाषा उसे कहते हैं जो केन्द्रीय और प्रादेशिक सरकारों द्वारा पत्र-व्यवहार, राजकार्य और सरकारी लिखा-पढ़ी के काम में लायी जाए ।"

प्रो. देवेन्द्रनाथ शर्मा के अनुसार -

"राजभाषा का प्रयोग मुख्यत: चार क्षेत्रों में अभिप्रेत है - शासन, विधान, न्यायपालिका और कार्यपालिका । इन चारों में जिस भाषा का प्रयोग हो उसे राजभाषा कहेंगे ।"

विद्वानों के विचार से राजभाषा में निम्नलिखित कार्यों को करने की क्षमता होनी चाहिए -

1. प्रशासन कुशलता
3. विज्ञान एवं तकनीक में उन्नति
3. नौकरी के अवसरों में समानता
4. राष्ट्रीय मर्यादा
5. ग्राह्यता

हिन्दी में यह सब क्षमताएँ मौजूद हैं इसलिए संविधान में किए गए प्रावधान के अनुसार भारत की राजभाषा देवनागरी लिपि में हिन्दी है ।

5. **विशिष्ट या व्यावसायिक भाषा**

समाज के सभी लोगों का व्यवसाय या कार्य भिन्न-भिन्न होता है । व्यवसाय के अनुसार इन सभी की भाषा भी अलग-अलग होती है । ये भाषाएँ आदर्श भाषा के ही विभिन्न रूप होती हैं, जो अधिकतर शब्द-समूह, मुहावरे तथा प्रयोग आदि में एक-दूसरे से भिन्न होती हैं । इसीलिए एक अध्यापक की भाषा डॉक्टर से और एक डॉक्टर की भाषा इंजीनियर या वकील की भाषा से भिन्न होती है ।

6. **सम्पर्क भाषा**

अनेक भाषाओं के अस्तित्व के बावजूद व्यक्ति-व्यक्ति, राज्य-राज्य तथा देश-विदेश के बीच जिस भाषा के माध्यम से एक-दूसरे से सम्पर्क स्थापित किया जाता है सम्पर्क भाषा कहलाती है ।

हिन्दी बिहार, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, राजस्थान, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश और दिल्ली की भाषा के साथ-साथ असम, बंगाल, उड़ीसा, महाराष्ट्र, गुजरात, कर्नाटक में अनेक धार्मिक और व्यापारिक कारणों से काफी कुछ समझी और बोली जाती है । यह भारतीय भाषाओं के निकट है और इसकी प्रकृति भी सरल है । इसके अतिरिक्त इसमें भारत की भाषाओं का प्रतिनिधित्व करने की असीम क्षमता है । जबकि अन्य भारतीय भाषाएँ कुछ अपवाद क्षेत्रों को छोडकर अपने-अपने प्रदेशों में ही बोली और समझी जाती है । इसलिए भारत की सम्पर्क भाषा हिन्दी है ।

7. **कृत्रिम भाषा**

कृत्रिम भाषा में मानकीकरण और स्वायत्तता के लक्षण होते हैं, किन्तु वह न तो परम्परा से अर्जित होती है और न ही एक भाषी समुदाय लोग उसे दैनंदिन विचार-विनिमय के माध्यम के रूप में अपनाते हैं । अर्थात् उसमें ऐतिहासिकता और जीवंतता का अभाव होता है ।

कृत्रिम भाषा के दो रूप हैं -

(।) **गुप्त भाषा**

गुप्त भाषा प्रतीकात्मक शब्द, नये शब्द, अंक, शब्दों या रूपों के आरम्भ, मध्य या अंत में ध्वनि-योग तथा विपर्यय आदि की सहायता से प्रायः बनायी जाती है ।

चूँकि गुप्त भाषा बातचीत एवं विनोद के लिए बनती है, अतः इसे प्रचलित भाषा से अधिकाधिक दूर रखा जाता है, ताकि उसे कोई समझ न सके । इस भाषा का एक उद्देश्य अपनी बातों को अनपेक्षित लोगों को मालूम न होने देना भी होता है ।

गुप्त भाषा का प्रयोग प्रायः सेना, गुप्तचर विभाग, चोरों, डाकूओं, क्रांतिकारियों द्वारा किया जाता है ।

(2) **साधारण भाषा**

साधारण भाषा प्रचलित भाषा से मिलती-जुलती होती है और ऐसी बनायी जाती है कि लोग उसे यथाशीघ्र समझ सकें और उसका प्रयोग कर सकें ।

बोलापूक, इंटरलिंगुआ, ऐस्पेरैंतो, लैंग्लन, इडो, आएला, नोवियल, ऑक्सिडेंटल आदि साधारण कृत्रिम भाषा है । इनमें से ऐस्पेरैंसी सर्वाधिक प्रसिद्ध है, जिसका निर्माण 1887 ई. में बेलीस्टाक नगर निवासी डॉ. एल. जमेनहॉफ द्वारा किया गया । इस भाषा की लिपि रोमन है तथा इसकी आधी से अधिक धातुएँ लैटिन से ली गई हैं और शेष जर्मन तथा अन्यभाषाओं से । वाक्य रचना की दृष्टि से यह अश्लिष्ट योगात्मक भाषा है ।

8. **मानक या आदर्श भाषा**

किसी भाषा के जिस रूप का व्यवहार एक विस्तृत क्षेत्र में शिक्षा, शासन और साहित्य रचना के लिए होता है वह उस भाषा का मानक रूप कहलाता है ।

मानक भाषा मूलतः जनसाधारण की बोली ही हुआ करती है । अनेक बोलियों में से बोली विशेष जब किन्हीं अनुकूल धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों के कारण अन्य बोलियों की अपेक्षा विस्तृत क्षेत्र में शिक्षा, संस्कृति और साहित्य का माध्यम बन जाती है तो वह उस भाषा के मानक रूप में स्वीकार्यता प्राप्त कर लेती है ।

मानक भाषा में विभिन्न भाषा रूपों में से ठोस आधार पर किसी एक रूप को स्वीकार किया जाता है और भाषा को एकरूपता प्रदान की जाती है । मानक भाषा आरोपित भाषा होते हुए भी ऐतिहासिक और विकास में स्वाभाविकता लिए हुए होती है । उसमें ऐसी जीवंतता होती है कि कि समाज का एक समुदाय मातृभाषावत् उसका प्रयोग करता है ।

मानक भाषा के मौखिक रूप के वाक्य छोटे-छोटे होते हैं, जबकि लिखित रूप के वाक्य अधिकतर बड़े होते हैं । इस प्रकार मौखिक रूप स्वाभाविक और लिखित रूप कृत्रिम होता है ।

व्याकरणसम्मत होने एवं शिक्षित समुदाय में प्रतिष्ठित होने के कारण इसे परिनिष्ठित या आदर्श/टकसाली भाषा की संज्ञा भी दी जाती है ।

9. **अपभाषा**

अपभाषा मानक भाषा की तुलना में विकृत अथवा अपभ्रष्ट होती है । यह भाषा जनसामान्य के विशेष वर्ग तथा आंचलिक बस्ती के विशिष्ट लोगों में प्रयुक्त होती है ।

इस भाषा में मानक भाषा के अनेक प्रचलित शब्द अपरिनिष्ठित रूप में पाए जाते हैं – गया - गवा, मेरको, किया - करा, क्यों - कायको, कायकू, तुझे - तेरे को, तेरकू आदि । इसी प्रकार कुछ शब्द और वाक्य भिन्न रूप व अर्थ में प्रचलित होते हैं जैसे – "मक्खन" शब्द "चापलूसी" का बोधक होता है और "मैंने जाना है", "मुझ पर रूपये नहीं है' वाक्य रचना का प्रयोग होता है ।

इस भाषा में परिनिष्ठित भाषा में अश्लील समझे जानेवाले शब्दों और अगृहीत मुहावरों का प्रयोग भी होता है ।

मोटे तौर पर भाषा को दो भागों में बाँटा जा सकता है -

1. सामान्य भाषा
2. प्रयोजनमूलक भाषा

1. **सामान्य भाषा**

मनुष्य अपने सामान्य व्यावहारिक जीवन में जिस भाषा का प्रयोग करता है उसे व्यावहारिक भाषा या सामान्य भाषा कहते हैं । यह भाषा सहज होती है । इस भाषा का व्यवहार· क्षेत्र विस्तृत होता है । इस भाषा की अभिव्यक्ति शैली लाक्षणिक, व्यंजनापूर्ण, अलंकारिक एवं विनोदमयी होती है । इसमें व्याकरण पर विशेष ध्यान न देकर व्यावहारिक रूप को प्रधानता दी जाती है । अर्थात् इसमें व्यावहारिक शुद्धता के बजाय उपयोगिता पर बल दिया जाता है ।

2. **प्रयोजनमूलक भाषा**

प्रयोजनमूलक भाषा अंग्रेजी शब्द "फंक्शनल लैंग्वेज" का पर्याय है । प्रयोजन-मूलक भाषा का अर्थ है - वह भाषा जिसका प्रयोग किसी प्रयोजन विशेष अथवा कार्य विशेष से किया जाए । इसे कामकाजी भाषा अथवा व्यावहारिक भाषा भी कहा जाता है ।

डॉ. प्रभात के अनुसार -

"कामकाजी भाषा सम्प्रत्यय का आधार बनाती है । यह अनुभव के अंश निकाल देती है । अतः वहाँ तथ्य और सिद्धान्त ही रह जाते हैं । कामकाजी भाषा सम्प्रत्यय, तथ्य और सिद्धान्त के समन्वय के साथ परिणामोन्मुखी काम करती है ।"

प्रयोजनमूलक भाषा की अभिव्यक्ति शैली शुष्क, सपाट, स्पष्ट, गम्भीर, अलंकाररहित, सीधी, सरल, एकार्थक एवं सूचना प्रधान होती है । इसमें शब्द का अर्थ परिसीमित होता है तथा लक्षणा-व्यंजना के सहारे इसका कोई अन्य अर्थ निकाले जाने की सम्भावना नहीं होती । यह भाषा अर्जित होती है और इसका व्यवहार क्षेत्र संकुचित और सीमित होता है । यह भाषा अभ्यास और विशेष प्रयत्न से सीखी जा सकती है । प्रयोजनमूलक भाषा का सम्बन्ध मूलतः हमारी जीविका के साथ रहता है इसलिए इस भाषा का पहला और अन्तिम लक्ष्य सेवा माध्यम होता है । चूँकि इसका प्रयोग शासन, विधान, न्यायपालिका एवं कार्यपालिका में मुख्य रूप से होता है अतः यह शिक्षित वर्ग द्वारा ही प्रयुक्त होती है । यह भाषा बुद्धिजीवियों, फाइलों, सन्दर्भों और पुस्तकों से समस्याओं का समाधान ढूँढती है । इसका व्यवहार क्षेत्र राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय, राजनैतिक बोध के सम्पर्क से सम्बद्ध होता है, इसलिए राजनैतिक दृष्टि से इसका महत्व अत्यधिक होता है ।

3. प्रयोजनमूलक हिन्दी

भारत में अत्यन्त प्राचीन काल से शासन चलता आया है । इस शासन का अध्यक्ष राजा रहा है । राजा के पास ही न्याय सम्बन्धी अधिकार हुआ करते थे । अर्थात् कार्यपालिका और न्यायपालिका दोनों ही शक्तियाँ एक ही व्यक्ति अथवा निकाय में निहित होती थीं । धर्म तथा नीति के ग्रन्थ, प्रशासन की मार्गदर्शक रूप-रेखाएँ निर्धारित करते थे । रूढ़ियों और परम्पराओं से चली आ रही प्रक्रियाओं से ही प्रशासन तन्त्र का रथ चलता था । अधिकांश आदेशों, निदेशों का निर्वाह मौखिक रूप से हो जाता था, परन्तु समय के साथ प्रशासन तन्त्र बदला और लिखित आदेशों, निदेशों की आवश्यकता महसूस की जाने लगी और राजकाज तत्कालीन भाषा में होने लगा ।

प्राचीन भारत में देश की सम्पर्क भाषाएँ क्रमशः संस्कृत, पालि, प्राकृत एवं अपभ्रंश थीं और इन्हीं भाषाओं के माध्यम से तत्कालीन शासक राजकाज किया करते थे । अर्थात् उस समय एक ही भाषा राष्ट्रभाषा एवं राजभाषा के उत्तरदायित्व का निर्वाह करती थी । किन्तु मध्यकाल में जब देश की आजादी मुसलमानों और तत्पश्चात् अंग्रेजों द्वारा छीन ली गई और देश गुलाम हो गया तब भारत की राजभाषा क्रमशः फारसी और अंग्रेजी बनायी गई । परन्तु राष्ट्रभाषा और अखिल भारतीय विचार-विमर्श व सम्पर्क की भाषा हिन्दी रही ।

ब्रिटिश शासन का अन्त होने के पश्चात् भी भारत के राजकाज का कार्य अंग्रेजी भाषा में ही होता था, जो कि देश की साधारण जनता की समझ से बाहर थी । चूँकि किसी देश की राष्ट्रीय अस्मिता उसकी अपनी भाषा के माध्यम से ही अभिव्यक्ति पा सकती है । राजभाषा ही उसकी एकता एवं आत्मसम्मान

का प्रतीक होती है । इसके अलावा राष्ट्र के नव-निर्माण, राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक एकता, अन्तर्प्रांतीय व्यवहार के लिए राष्ट्रभाषा का प्रयोग ही आवश्यक है । इसलिए देश के चिंतकों, मनीषियों, राष्ट्रीय नेताओं, शिक्षा शास्त्रियों ने इस तथ्य को स्वीकार किया कि राष्ट्रभाषा हिन्दी ही राजकाज की भाषा बने क्योंकि हिन्दी में राजभाषा के लिए आवश्यक सभी तत्व मौजूद हैं । हिन्दी का जन्म इस गौरवमयी भारत भूमि के उदर से हुआ है और इसमें भारत की आत्मा सन्निहित है । भारत के अधिकांश लोग इसे बोलते और समझते हैं । हिन्दी की वाणी में भारत बोलता है, भारतीय संस्कृति बोलती है ।

आजादी के बाद देश के संविधान निर्माताओं ने भाषा के सम्बन्ध में एक समिति का गठन किया, जिसमें विभिन्न भाषा-भाषियों को शामिल किया गया । इस समिति के सुझावों तथा जनता की आकांक्षाओं के अनुरूप 26 जनवरी, 1950 को देश में नया संविधान लागू किया गया । इस संविधान में भारत को एक पूर्ण स्वतन्त्र, प्रभुसत्ता सम्पन्न, एकतांत्रिक गणराज्य स्वीकार किया गया और देवनागरी लिपि में लिखी जाने-वाली हिन्दी को संविधान के अनुच्छेद 343 (1) के अनुसार संघ की राजभाषा बनाया गया और हिन्दी को केन्द्रीय राजभाषा, प्रादेशिक भाषा एवं सहराजभाषा के रूप में मान्यता दी गई है

1. हिन्दी की विशेषताएं

हिन्दी में विद्यमान निम्नलिखित तत्वों के कारण हिन्दी को राजभाषा का दर्जा दिया गया है -

1. **सरलता -**

हिन्दी 50% संस्कृत और बाकी 50% उर्दू, ब्रज, अवधी, मैथिली, मराठी, राजस्थानी, गुजराती आदि भाषाओं तथा उपभाषाओं के शब्दोंसेभरपूर है । इसी कारण संस्कृत-गर्भित हिन्दी भारत के भिन्न-भिन्न प्रांतों में सरलता से समझी जाती है । इसके साथ ही हिन्दी सरल, सुबोध और अति स्पष्ट भाषा है, जो कि किसी देश की भाषा होने के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण तत्व है । हिन्दी में सरलता का गुण तो विद्यमान है ही, इसका गठन भी सुनिश्चित है, इसके व्याकरण में आन्तरिक सुसंगति है, संस्कृत का मूलाधार एवं पृष्ठभूमि सहज सुलभ होने के कारण इसके शब्दों में निश्चितार्थता एवं स्पष्टता भी है ।

2. **स्पष्टता -**

हिन्दी परिशुद्ध, वैज्ञानिक और स्पष्ट भाषा है । इसके शब्दों और वाक्यों में स्पष्टता पायी जाती है तथा इसके एक शब्द या वाक्य का , केवल एक ही अर्थ निकलता है । अंग्रेजी की तरह इसमें अस्पष्टता नही पायी जाती । उदा. –

शब्द	Sister in law	भाभी, साली

वाक्य –	1.	तू गया तुम गए तू गई तुम गई	You went
	2.	आइए आ जाइये कृपया आइये कृपया आ जाइये	Please come

3. **निश्चितार्थता** -

हिन्दी में निश्चितार्थता का गुण है, जो कि प्रशासनिक भाषा के शब्दों के लिए परमावश्यक है । भ्रांतियुक्त, संदेहजनक और श्लेषात्मक भाषा का प्रशासन में कोई स्थान नही होता।

4. **पारिभाषिकता** -

हिन्दी में पारिभाषिकता का गुण है, जो प्रशासन भाषा को सामान्य भाषा से भिन्न करने में सहायक है । परिभाषाएँ भाषा में संक्षिप्तता लाती हैं । संक्षिप्तता भाषा का एक गुप है और यह प्रशासकीय भाषा की आवश्यकता है । परिभाषा से किसी एक शब्द के अन्तर्गत वह समस्त अर्थ समेटा जा सकता है, जो अन्यथा एक वाक्य-समूह द्वारा प्रकट किया जाता ।

5. **लचीलापन** -

हिन्दी भाषा के शब्दों में लचीलापन है । हिन्दी अथवा संस्कृत के एक शब्द से कई पर्याय बनते हैं । जैसे - संस्कृत के विधि शब्द से कई पर्याय बने हैं - विधि, विधान, विधायक, विधेयक, दण्ड विधान, संविधान, सँवैधानिक, वैधानिक, वैद्य आदि।

6. **सार्वदेशिक प्रसार** -

हिन्दी को राजकाज की भाषा बनाने का एक कारण यह भी है कि हिन्दी कश्मीर से कन्याकुमारी तक और पश्चिम बंगाल से कच्छ तक के विस्तृत भूभाग में बोली और समझी जाती है, जबकि अन्य भारतीय भाषाएँ कुछ अपवाद क्षेत्रों को छोड़कर अपने-अपने प्रदेशों में ही बोली और समझी जाती है ।

7. **शब्दावली की उपलब्धता -**

सामान्य वार्तालाप या विचार-विमर्श में किसी विचार को एक वाक्य के स्थान पर कई वाक्यों में स्पष्ट किया जा सकता है । परन्तु प्रशासनिक व्यवहार में शब्द चयन का अति महत्व होता है । प्रशासन के वैविध्यपूर्ण कार्य-कलापों के लिए उच्च स्तर की शब्दावली की आवश्यकता होती है ।

भारत सरकार के वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग ने लगभग एक हजार विद्वानों और विशेषज्ञों के सहयोग से तीन लाख से अधिक पारिभाषिक शब्दों और अभिव्यक्तियों को अन्तिम रूप दिया है । इसके अलावा और भी कई शब्दावलियाँ तैयार की जा रही हैं । अर्थात् हिन्दी के काम-काज में शब्दावली की समस्या नहीं है । कुछ लोगों को यह भ्रम है कि आंग्ल में भारतीय भाषाओं की अपेक्षा अधिक शब्द हैं, जबकि ऐसा नहीं है क्योंकि आंग्ल भाषा के शब्दकोशों में लगभग 5 लाख अर्थात् पूरे के पूरे शब्द रहते हैं, जबकि भारतीय भाषाओं के कोशों में शब्दों की संख्या कम रहती है, जिसका कारण है कि कोशकार उपसर्ग और प्रत्यय के योग से बने सभी शब्द नहीं देते । हिन्दी की केवल 1700 धातुएँ, कुछ उपसर्ग तथा कुछ प्रत्यय का ज्ञान होने पर करोड़ों शब्द बनाए जा सकते हैं । संस्कृत से शब्द ग्रहण करनेवाली भारतीय भाषा हिन्दी की शब्दावली तथा शब्द निर्माण की क्षमता आंग्ल भाषा से अधिक है ।

8. **स्थायी स्थिति पर निर्भरता -**

हिन्दी को हिन्दी में उपलब्ध विभिन्न विषयों के वैविध्यपूर्ण ग्रन्थों ने स्थायित्व प्रदान किया है । यद्यपि संस्कृत शताब्दियों से बोलचाल की भाषा नहीं है, तथापि उसका अमर साहित्य हमारी अमूल्य निधि है । इसके कारण संस्कृत आज भी स्थायी और सुदृढ़ आधार पर खड़ी है । संस्कृत के स्थायी आधार पर स्थित होने के कारण हिन्दी ने भी साहित्य, विज्ञान और अन्य दिशाओं में अभूतपूर्व प्रगति की है और इसीलिए राजभाषा बनने का गौरव भी प्राप्त किया है ।

9. **राजनैतिक व्यवहार क्षमता -**

राजनीतिज्ञ को अपना दृष्टिकोण जनता के समक्ष रखने और जनता के साथ भावनात्मक एक्य स्थापित करने के लिए जनता की भाषा की आवश्यकता होती है, जिसके लिए हिन्दी ही सर्वगुण सम्पन्न है । यह जन-जन की भाषा है और इसमें सब तरह के भावों को व्यक्त करने की अद्‌भुत शक्ति है ।

2. देवनागरी लिपि की विशेषताएँ

देवनागरी लिपि की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं, जिसके कारण उसे संविधान के अनुसार राज-काज के कार्य की लिपि की मान्यता दी गई है -

1. देवनागरी लिपि पूर्णतः भारतीय है -

देवनागरी लिपि की उत्पत्ति और विकास दोनों ही भारत-भूमि में हुआ है । यह भारत की सर्वाधिक प्राचीन लिपि ब्राह्मी से विकसित हुई लिपि है । इसकी जड़ें देश के इतिहास और संस्कृति में है । इस प्रकार देश की प्रतिष्ठा एवं जनता से इस लिपि का भावात्मक सम्बन्ध है ।

2. सार्वदेशिक प्रसार -

भारत में जितनी लिपियाँ प्रचलित हैं उनमें देवनागरी लिपि को जाननेवालों की संख्या सर्वाधिक है । भारत में रोमन लिपि जाननेवाले 3-4%, बंगला, गुरूमुखी, उड़िया, तमिल, तेलुगु लिपि जाननेवाले 5-8% तथा देवनागरी लिपि जाननेवाले 50% से अधिक हैं । चूँकि देवनागरी लिपि का विकास भारत की प्राचीन लिपि ब्राह्मी से हुआ है, जिससे भारत की लगभग सभी लिपियों का विकास हुआ है इसलिए देवनागरी लिपि भारत की अन्य सभी लिपियों से सम्बन्ध स्थापित किए हुए है और इसी कारण उसकी व्यापकता सार्वदेशिक है ।

3. देवनागरी लिपि सरल है -

देवनागरी लिपि भारत की अन्य लिपियों की तुलना में अन्य सभी लिपियों से अधिक निकट एवं घनिष्ठ है । भारत की अधिकांश जनता इस लिपि से परिचित है । संस्कृत, मराठी में देवनागरी पहले से ही व्यवहृत है । गुजराती लिपि व देवनागरी लिपि में कोई विशेष अन्तर नहीं है । केवल वह शिरोरेखा विहीन है । बंगला और नागरी में अनेक समानता है केवल कुछ वर्ण ही भिन्न हैं इसलिए गुजराती और बंगला जाननेवाले बिना सीखे ही, मात्र अनुमान से देवनागरी लिपि पढ़ सकते हैं । गुरूमुखी के भी कुछ वर्ण विशेष ही भिन्न हैं शेष वर्ण देवनागरी के ही परिवर्तित रूप हैं । इसलिए भारत की अन्य लिपियों की तुलना में देवनागरी लिपि लेखन, वाचन दोनों ही दृष्टियों से अधिक सरल और सहज है और अपेक्षाकृत कम समय में सीखी जा सकती है।

4. देवनागरी लिपि की ध्वनियाँ पूर्ण तथा वैज्ञानिक हैं -

(1) देवनागरी लिपि की वर्णमाला का विभाजन -

देवनागरी लिपि की वर्णमाला का विभाजन ह्स्व तथा दीर्घ स्वरों और व्यंजनों में है । ह्स्व-दीर्घ के युग्म (अ-आ, इ-ई, उ-ऊ) भी साथ-साथ हैं । इसके अतिरिक्त प्रारम्भ में मूल स्वर (अ, आ, इ, ई, उ, ऊ) हैं उसके बाद संयुक्त स्वर (ए, ऐ, ओ, औ) हैं । हर वर्ग के व्यंजन घोषत्व के आधार पर दो प्रकार के हैं - प्रथम दो अघोष तथा अन्तिम तीन घोष । इसके साथ ही पहले, तीसरे और पाँचवे अल्पप्राण हैं तथा

दूसरे, चौथे महाप्राण । अनुनासिक व्यंजन वर्णों के अन्त में हैं । व्यंजन स्थान और प्रयत्न के अनुकूल व्यवस्थित हैं और मुख के विभिन्न भागों यथा - कण्ठ, ताल, मूर्द्धा, दन्त, ओष्ठ, नासिका आदि में क्रम से विभाजित हैं । उच्चारण स्थान के नियत होने से अक्षरों के ठीक-ठीक उच्चारण में सुविधा होती है ।

(2) ध्वनि और प्रतीक की एकता -

देवनागरी लिपि में एक ध्वनि को व्यक्त करने के लिए एक प्रतीक चिह्न का ही प्रयोग होता है । इसके साथ ही साथ एक चिह्न से एक ही ध्वनि का बोध होता है। देवनागरी लिपि के एकरूपता और सुस्पष्टता गुण के कारण ही शब्दों की वर्तनी को उस रूप में रहने की आवश्यकता नहीं होती ।

(3) लिपि चिह्नों की पर्याप्तता-

लिपि चिह्नों की पर्याप्तता की दृष्टि से भी देवनागरी लिपि बहुत सम्पन्न है । इसमें जितनी ध्वनियाँ हैं उतने ही संकेत चिह्न हैं, जबकि रोमन में स्वर ध्वनियों

2। हैं और संकेत चिह्न 5-7 ही हैं । कुछ ध्वनियों के लिए तो कोई संकेत चिह्न ही नहीं है ।

(4) सुपाठ्यता -

सुपाठ्यता किसी भी लिपि के लिए अनिवार्यतः आवश्यक गुण है । इस दृष्टि से भी देवनागरी लिपि वैज्ञानिक लिपि है । चूँकि इसमें दीर्घ और ह्रस्व दोनों प्रकार के स्वरों, अनुस्वारों तथा चन्द्र बिन्दु के उच्चारण के लिए स्पष्ट एवं स्वतन्त्र संकेत चिह्न हैं इसलिए इसमें जो लिखा जाता है वही पढ़ा जाता है और जो कहा जाता है वही लिखा जाता है ।

(5) देवनागरी लिपि सुन्दर है -

कलात्मक दृष्टि से देवनागरी लिपि के अक्षर सुन्दर और सुडौल हैं । इसके अक्षर आधुनिक लेखन और मुद्रण के यांत्रिक साधनों के लिए सरलता से अपनाए जा सकनेवाले हैं ।

(6) देवनागरी लिपि के ध्वनि-चिह्न पूर्ण हैं -

देवनागरी लिपि ध्वन्यात्मक लिपि है । ध्वन्यात्मक गुण के कारण देवनागरी लिपि के अक्षरों में केवल भारतीय भाषाओं को ही नहीं वरन् संसार की सभी भाषाओं को सरलता और स्पष्टतापूर्वक लिप्यंतरण करने तथा हूबहू उच्चारण करने की क्षमता है ।

4. अंतर

1. **बोली और भाषा**

	बोली	**भाषा**
1.	बोली बहुत-सी मिलती-जुलती उपबोलियों (जो कि बहुत-सी व्यक्ति बोलियों का सामूहिक रूप होती है) का सामूहिक रूप होती है । अर्थात् एक बोली में कई उपबोलियाँ होती हैं जैसे - बुन्देली बोली के अन्तर्गत लोधान्ती, राठौरी तथा पँवारी आदि उपबोलियाँ हैं ।	भाषा बहुत-सी मिलती-जुलती बोलियों(जो कि बहुत-सी उपबोलियों का सामूहिक रूप होती है) का सामूहिक रूप होती है । अर्थात् एक भाषा में कई बोलियाँ होती हैं जैसे - हिन्दी में खड़ी बोली, ब्रज, अवधी आदि बोलियाँ हैं ।
2.	किसी बोली के अन्तर्गत एक या अधिक भाषाएँ नहीं हो सकतीं ।	एक भाषा में एकाधिक बोलियाँ होती हैं ।
3.	बोली में उच्चारण, शब्द-समूह, व्याकरण इत्यादि का भेद रहते हुए भी बोधगम्यता होती है ।	विभिन्न भाषा में उच्चारण, शब्द-समूह, व्याकरण इत्यादि का भेद तो होता ही है, उनमें परस्पर बोधगम्यता बहुत कम होती है (उदा. पंजाबी और हिन्दी) या बिल्कुल नहीं होती (उदा. अंग्रेजी और हिन्दी).
4.	बोली में ऐतिहासिकता और जीवंतता के लक्षण विद्यमान रहते हैं, किन्तु यह मानकीकरण और स्वायत्तता से रहित होती है ।	भाषा में ऐतिहासिकता, जीवंतता, मानकीकरण और स्वायत्तता यह चारों लक्षण एक साथ मिलते हैं ।
5.	बोली का क्षेत्र अपेक्षाकृत सीमित होता है । यह क्षेत्रीय बोलचाल और लोक साहित्य तक सीमित होती है । साहित्य के क्षेत्र में इसका अपवाद मिलता है । आधुनिक काल से पूर्व हिन्दी का सारा साहित्य ब्रज, अवधी, मैथिली, राजस्थानी आदि तथाकथित बोलियों में ही लिखा गया है ।	भाषा का क्षेत्र व्यापक होता है । चूँकि एक विस्तृत भू-भाग के बृहत्तर जन-समुदाय के विचार-विनिमय का माध्यम बनने के साथ ही साथ शिक्षा, साहित्य और सरकारी काम-काज का माध्यम बनने के बाद ही बोली भाषा बनती है । इसलिए भाषा का व्यवहार शिक्षा, शासन, साहित्य रचना सभी क्षेत्रों में होता है ।

2. **राष्ट्रभाषा और राजभाषा**

	राष्ट्रभाषा	राजभाषा
1.	राष्ट्रभाषा सम्पूर्ण देश में संचरण करनेवाली, राष्ट्र की बहुसंख्यक जनता के द्वारा व्यवहृत अखिलदेशीय सम्पर्क भाषा होती है ।	राजभाषा किसी देश अथवा राष्ट्र की प्रशासनिक भाषा होती है ।
2.	राष्ट्रभाषा का सम्बन्ध राष्ट्र के शिक्षित एवं अशिक्षित नागरिकों के व्यवहार की भाषा से होता है ।	राजभाषा का सम्बन्ध प्रशासकों, सरकारी कर्मचारियों एवं शिक्षितों से रहता है ।
3.	राष्ट्रभाषा अपने राष्ट्रव्यापी स्वरूप का प्रतिपादन करती है ।	राजभाषा का प्रयोग शासन, विधान,न्यायपालिका एवं कार्यपालिका इन चार क्षेत्रों में प्रमुख रूप से होता है ।
4.	जनसाधारण की भाषा ही समय, स्थान और परिस्थिति के अनुसार स्वरूप परिवर्तन कर अपनी असीम आन्तरिक शक्ति से उत्तराधिकारिणी के रूप में राष्ट्रभाषा का पद स्वतः प्राप्त करती है ।	राजभाषा को राजभाषाका महत्वपूर्ण पद प्रदान किया जाता है । राजभाषा शासकों की भाषा-कभी-कभी विदेशी भाषा भी-होती है ।
5.	किसी राष्ट्र की भाषा उस राष्ट्र की सबसे बड़ी पहचान होती है, इसलिए स्वतन्त्र राष्ट्र में राष्ट्रभाषा उतनी ही आवश्यक है जितना राष्ट्रगान, राष्ट्रध्वज या उस राष्ट्र की राजनीतिक प्रभुसत्ता ।	राजकीय काम-काज सुचारू रूप से चलाने के लिए राजभाषा आवश्यक होती है ।
6.	राष्ट्रभाषा राष्ट्र के नवीन निर्माण, उसकी एकता और अखण्डता तथा सांस्कृतिक एवं सामाजिक दृष्टि से महत्वपूर्ण होती है ।	राजभाषा का महत्व राजनीतिक दृष्टिकोण से आंका जाता है ।
7.	राष्ट्रभाषा लोकाश्रित होती है ।	राजभाषा राज्याश्रित होती है ।

8.	राष्ट्रभाषा मस्तिष्क और उससे भी अधिक हृदय-पक्ष की भाषा होती है। इसमें राष्ट्रीयता की भावनाओं से राष्ट्र-हृदय को जागृत करने की क्षमता होती है ।	राजभाषा मस्तिष्क-पक्ष से जुड़ी भाषा होती है इसमें राष्ट्रीय समस्याओं को बौद्धिक स्तर पर सुलझाने की क्षमता होती है ।
9.	राष्ट्रभाषा जनसाधारण में व्यापिनी होती है । यह समस्त राष्ट्र की वाणी होती है इसलिए इसका क्षेत्र विस्तृत होता है । इसमें वास्तविक देश झांकता है ।	राजभाषा शासन-सूत्र में सीमित होती है । इसमें सत्ता का वैभव प्रतिभासित होता है ।

3. **प्रयोजनमूलक भाषा और साहित्यिक भाषा**

	प्रयोजनमूलक भाषा	**साहित्यिक भाषा**
1.	प्रयोजनमूलक भाषा अभिधापरक, एकार्थक, स्पष्ट तथा सीधी होती है, ताकि कहने अथवा लिखनेवाले व्यक्ति की बात का निश्चित और सही आशय समझा जा सके । इसमें व्यंजनार्थकता की कोई गुंजाइश नहीं होती । भाषा का स्वरूप सुबोध, गम्य होता है, जिससे भाव, विचार और विषय को सरलतम भाषा में समझा जा सके ।	साहित्यिक भाषा अर्थबहुल, व्यंजनाश्रित, लाक्षणिक, वक्र प्रयोग युक्त होती है ।
2.	यह भाषा आम बोलचाल की भाषा से भिन्न होती है। इसमें एक तरफ बोलचाल की भाषा की सी रवानी होती है तो दूसरी तरफ भाषा का एक मानक रूप भी होता है ।	बोलचाल की भाषा की तुलना में प्रायः यह कुछ कम विकसित, कुछ अलंकृत, कुछ कठिन तथा कुछ परम्परानुगामिनी होती है ।
3.	इस भाषा में एकरूपता, सुनिश्चितता एवं औचित्यता होती है ।	इस भाषा में अनेकरूपता, अनिश्चितता होती है ।
4.	इस भाषा का प्रयोग सभी प्रकार के दैनंदिन प्रशासनिक कार्यों के लिए किया जाता है ।	इस भाषा का प्रयोग साहित्यिक कार्यों के लिए होता है ।
5.	इसमें पारिभाषिक शब्दावली का विशेष महत्व होता है । **पारिभाषिक शब्द** पारिभाषिक शब्द वह शब्द होता है, जिसका किसी ज्ञान विशेष के क्षेत्र में एक निश्चित अर्थ में प्रयोग किया जाता है ।	इसमें शब्दावली का विशेष महत्व नहीं होता
6.	इसमें शब्द का अर्थ परिसीमित होता है तथा लक्षणा-व्यंजना के सहारे इसका कोई अन्य अर्थ निकाले जाने की सम्भावना नहीं होती है ।	इसमें शब्द का अर्थ असीमित होता है तथा लक्षणा-व्यंजना का अर्थ अधिक निकलता है ।
7.	यह भाषा औपचारिक होती है ।	यह भाषा अनौपचारिक होती है ।

4. प्रयोजनमूलक भाषा और सामान्य भाषा

	प्रयोजनमूलक भाषा	सामान्य भाषा
1.	प्रयोजनमूलक भाषा का सम्बन्ध सामाजिक आवश्यकता और जीवन की व्यवस्था से जुड़ा होता है, जो व्यक्तिपरक होते हुए भी समाज सापेक्ष होती है । इसका पहला और अन्तिम लक्ष्य सेवा-माध्यम होता है । यह भाषा जीविकोपार्जन का साधन होती है ।	सामान्य भाषा का प्रयोग सामान्य जनजीवन में दैनिक कार्यों के सन्दर्भ में होता है । इसका सम्बन्ध सौंदर्यपरक अनुभूति से होता है ।
2.	प्रयोजनमूलक भाषा, भाषा का दूसरा चरण है । सामान्य भाषा के रूप से परिचित हुए बिना प्रयोजनमूलक भाषा सीखना कठिन है ।	सामान्य भाषा, भाषा का पहला चरण है ।
3.	प्रयोजनमूलक भाषा अर्जित भाषा होती है और विशेष अभ्यास तथा प्रशिक्षण-शिक्षा द्वारा ही सीखी जा सकती है ।	सामान्य भाषा सहज भाषा होती है, इसके लिए किसी विशेष अभ्यास या शिक्षा की आवश्यकता नहीं होती है । यह सामान्य जीवन के परिवेश में ही सीखी जा सकती है ।
4.	प्रयोजनमूलक भाषा की अभिव्यक्ति शैली शुद्ध, वाच्यार्थ प्रधान, गम्भीर, अलंकार आदि से सीधी, विरहित, सरल, सपाट, स्पष्ट, एकार्थक होती है।	सामान्य भाषा की अभिव्यक्ति शैली लाक्षणिक, व्यंजनापूर्ण, आलंकारिक, संवेदनशील, हास्य, विनोदमयी होती है ।
5.	प्रयोजनमूलक भाषा का क्षेत्र संकुचित और सीमित होता है ।	सामान्य भाषा का व्यवहार-क्षेत्र विशाल एवं व्यापक होता है ।